

पर्यावरण विज्ञान में भारतीय ज्ञान की भूमिका

डॉ. अजय सिहाग

सहायक आचार्य (भूगोल)

राजकीय महाविद्यालय, श्रीविजयनगर

सारांश

पर्यावरण विज्ञान का अध्ययन मानव और प्रकृति के आपसी संबंधों को समझने का एक महत्वपूर्ण माध्यम है। भारतीय संस्कृति और परंपराओं में पर्यावरण संरक्षण का गहन ज्ञान और दृष्टिकोण पाया जाता है, जो आज भी प्रासंगिक है। प्राचीन भारतीय साहित्य, जैसे वेद, उपनिषद, पुराण, और स्मृतियां, पर्यावरण संरक्षण और सतत विकास की संकल्पना को स्पष्ट रूप से प्रस्तुत करते हैं।

इस शोध-पत्र में पर्यावरण विज्ञान में भारतीय ज्ञान की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि, परंपरागत तकनीकों और आधुनिक समय में उनकी प्रासंगिकता पर चर्चा की गई है। इसमें वैदिक ऋचाओं में वर्णित पर्यावरणीय संतुलन, आयुर्वेद में प्राकृतिक संसाधनों के उपयोग की विधियां, और जल संरक्षण के लिए प्राचीन तकनीकों का उल्लेख किया गया है।

यह शोध भारतीय दृष्टिकोण से पर्यावरण विज्ञान में योगदान की पुनः स्थापना करता है और सतत विकास के लिए पारंपरिक ज्ञान के पुनरुद्धार की आवश्यकता पर बल देता है।

मुख्य शब्द: पर्यावरण विज्ञान, भारतीय ज्ञान, जल संरक्षण, प्राकृतिक संसाधन, स्थायी कृषि, जैव विविधता, पर्यावरणीय संतुलन, पारिस्थितिकी

परिचय

पर्यावरण विज्ञान में भारतीय ज्ञान की भूमिका अत्यधिक महत्वपूर्ण और समृद्ध रही है। भारतीय संस्कृति और दर्शन में प्रकृति और उसके संसाधनों का संरक्षण, सम्मान और संतुलन बनाए रखने का अत्यधिक ध्यान रखा गया है। यह ज्ञान न केवल धार्मिक और सांस्कृतिक दृष्टिकोण से जुड़ा हुआ है, बल्कि इसमें वैज्ञानिक तथ्यों और प्राकृतिक संसाधनों के विवेकपूर्ण उपयोग की गहरी समझ भी निहित है। भारतीय परंपराओं में पर्यावरण का संरक्षण केवल एक वैज्ञानिक आवश्यकता नहीं बल्कि एक नैतिक और आध्यात्मिक कर्तव्य माना गया है। प्राचीन भारतीय ग्रंथों जैसे वेद, उपनिषद, पुराण, भगवद गीता, और धर्मशास्त्रों में प्रकृति को देवी-देवताओं के रूप में पूजा गया है। उदाहरण स्वरूप, पृथ्वी (भूमि माता), जल (गंगा), वायु (पवन), और आकाश (आकाशदेव) को पवित्र माना गया और इनका संरक्षण समाज की जिम्मेदारी समझी गई।

भारतीय पर्यावरणीय दृष्टिकोण यह भी बताता है कि मनुष्य और प्रकृति के बीच एक अटूट संबंध है। मनुष्य का कर्तव्य है कि वह प्राकृतिक संसाधनों का शोषण करने की बजाय उनका संरक्षण करे, ताकि आने वाली पीढ़ियाँ भी इनका उपयोग कर सकें। भारतीय पारंपरिक ज्ञान से यह समझ में

आता है कि पारिस्थितिकी संतुलन बनाए रखना, संसाधनों का विवेकपूर्ण उपयोग और उनका उचित प्रबंधन न केवल पर्यावरणीय संकटों से निपटने के लिए जरूरी है, बल्कि यह जीवन के हर क्षेत्र में संतुलन और समृद्धि लाने में सहायक है। इस प्रकार, भारतीय ज्ञान में पर्यावरण के प्रति यह जागरूकता और संतुलित दृष्टिकोण आज के पर्यावरणीय संकटों से निपटने के लिए अत्यधिक प्रासंगिक है।

पर्यावरण विज्ञान और भारतीय ज्ञान

9. वेदों और उपनिषदों में पर्यावरण का उल्लेख

वेद और उपनिषद भारतीय संस्कृति के आधार स्तंभ हैं, जिनमें प्राकृतिक संसाधनों के संरक्षण की आवश्यकता को समझाया गया है। वेदों में प्रकृति और उसके घटकों को देवी-देवता के रूप में पूजा जाता है, जैसे 'पृथ्वी' और 'आकाश' को देवी माना गया है। भारतीय दार्शनिकों ने यह समझाया है कि मनुष्य को प्राकृतिक संसाधनों का उपयोग विवेकपूर्ण और संतुलित तरीके से करना चाहिए ताकि आने वाली पीढ़ियों के लिए संसाधनों की उपलब्धता बनी रहे। वेदों और उपनिषदों में पर्यावरण को एक अद्वितीय और पवित्र रूप में प्रस्तुत किया गया है, जहां प्रकृति के प्रत्येक तत्व को दिव्य और जीवनदायिनी माना गया है। भारतीय धर्म और दर्शन में पर्यावरण का संरक्षण और सम्मान किया गया है, और इसे

जीवन के साथ एक समग्र संबंध के रूप में देखा गया है। इस संदर्भ में वेदों और उपनिषदों का योगदान बहुत महत्वपूर्ण है, क्योंकि इनमें प्रकृति और पर्यावरण के महत्व को स्पष्ट रूप से दर्शाया गया है।

(प) ऋग्वेद में पर्यावरण का उल्लेख

ऋग्वेद, जो कि विश्व का सबसे प्राचीन धार्मिक ग्रंथ माना जाता है, में पर्यावरण और प्राकृतिक तत्वों का विस्तृत रूप से वर्णन किया गया है। ऋग्वेद के कई श्लोकों में पृथ्वी, आकाश, जल, वायु, अग्नि, और सूर्य को देवता के रूप में पूजा गया है। विशेष रूप से, पृथ्वी को 'मातृ' (माँ) के रूप में सम्मानित किया गया है, और इसे 'भूमि देवी' के रूप में पूजा जाता है। ऋग्वेद में प्रकृति के प्रत्येक अंग को जीवनदायिनी और पवित्र माना गया है, जो जीवन को बनाए रखने के लिए आवश्यक हैं। ऋग्वेद में 'पृथ्वी' और 'आकाश' के बीच सामंजस्यपूर्ण संबंध पर बल दिया गया है, और यह संदेश दिया गया है कि मनुष्य को पृथ्वी का दोहन नहीं करना चाहिए, बल्कि उसका सम्मान करना चाहिए।

(पप) यजुर्वेद में प्रकृति का सम्मान

यजुर्वेद में भी प्रकृति के प्रति सम्मान और उसका संरक्षण महत्वपूर्ण स्थान रखता है। यजुर्वेद के श्लोकों में प्रकृति के विभिन्न तत्वों को जीवनदायिनी शक्तियों के रूप में माना गया है। यजुर्वेद में जल, आकाश, वायु और अग्नि जैसे प्राकृतिक तत्वों को पवित्र माना गया है और इनकी पूजा का महत्व बताया गया है। उदाहरण स्वरूप, यजुर्वेद में यह कहा गया है कि 'हम सभी प्रकृति के अंग हैं और सभी तत्वों से जुड़े हुए हैं।' इससे यह संदेश मिलता है कि पर्यावरण के साथ संतुलन बनाए रखना जरूरी है।

(पपप) उपनिषदों में पर्यावरण का तात्त्विक दृष्टिकोण

उपनिषदों में भारतीय दार्शनिकों ने प्राकृतिक तत्वों और पर्यावरण से जुड़ी गहरी तात्त्विक बातें की हैं। उपनिषदों में ब्रह्म (सर्वव्यापी परमात्मा) और प्रकृति के बीच संबंध को स्पष्ट किया गया है। यहाँ पर यह बताया गया है कि प्रकृति और पर्यावरण का प्रत्येक तत्व ब्रह्म का रूप है, और मनुष्य को अपने जीवन को इन तत्वों के साथ संतुलन बनाए रखते हुए जीने की आवश्यकता है। उपनिषदों में यह भी कहा गया है कि प्रकृति को किसी भी प्रकार से हानि पहुँचाना ब्रह्म के साथ असंतुलन और धर्म का उल्लंघन है।

२. हिंदू धर्म और पर्यावरणीय दृष्टिकोण

हिंदू धर्म में 'धर्म' का अर्थ केवल धार्मिक कृत्यों तक सीमित नहीं है, बल्कि यह समाज और प्रकृति के साथ सामंजस्यपूर्ण संबंध बनाने की बात भी करता है। 'अर्थशास्त्र'

और 'मनुस्मृति' जैसे ग्रंथों में प्राकृतिक संसाधनों के उचित उपयोग के लिए सशक्त दिशा-निर्देश दिए गए हैं। 'वृक्षों की पूजा', 'गंगा स्नान', और 'पशु अधिकार' जैसे अनुष्ठान पर्यावरण के प्रति सम्मान की भावना को व्यक्त करते हैं। हिंदू धर्म में प्रकृति और पर्यावरण को अत्यधिक महत्व दिया गया है। यह धर्म जीवन के प्रत्येक पहलू को प्रकृति से जुड़ा हुआ मानता है और सभी प्राकृतिक तत्वों को दिव्य, पवित्र, और जीवनदायिनी मानते हुए उनके साथ सामंजस्यपूर्ण संबंध बनाए रखने की बात करता है। हिंदू धर्म में पर्यावरणीय दृष्टिकोण केवल आस्था और पूजा तक सीमित नहीं है, बल्कि यह जीवन जीने के एक तरीके के रूप में प्रस्तुत किया गया है, जिसमें प्रकृति का संरक्षण और सम्मान प्रमुख है।

(i) प्रकृति को देवी-देवता के रूप में पूजा जाना

हिंदू धर्म में पृथ्वी, आकाश, जल, वायु, और अग्नि जैसे प्राकृतिक तत्वों को देवता या देवी के रूप में पूजा जाता है। उदाहरण के लिए: पृथ्वी (भूमि देवी): पृथ्वी को 'भूमि देवी' के रूप में पूजा जाता है और इसे माता के रूप में सम्मानित किया जाता है। यह धार्मिक विचार मनुष्य को यह सिखाता है कि पृथ्वी का सम्मान करना चाहिए और उसकी रक्षा करनी चाहिए, क्योंकि पृथ्वी सभी जीवों का पालन-पोषण करती है।

जल (गंगा देवी):

जल को जीवन का स्रोत माना गया है, और विशेष रूप से गंगा नदी को श्रृंग देवी के रूप में पूजा जाता है। जल को शुद्ध और पवित्र माना गया है, और उसका संरक्षण हिंदू धर्म में अत्यधिक महत्वपूर्ण है।

वृक्ष (वृक्ष पूजा):

वृक्षों की पूजा भी हिंदू धर्म का एक महत्वपूर्ण हिस्सा है। 'वट वृक्ष', 'पीपल वृक्ष', और 'तुलसी' जैसे वृक्षों को देवताओं का रूप माना जाता है और इन्हें पूजा जाता है। यह दृष्टिकोण हमें यह सिखाता है कि वृक्षों का संरक्षण करना चाहिए, क्योंकि ये पर्यावरण के लिए आवश्यक हैं और जीवन के लिए अहक्सीजन प्रदान करते हैं।

(ii) धर्म, कर्म और पर्यावरण

हिंदू धर्म में 'धर्म' का अर्थ केवल धार्मिक कर्तव्यों तक सीमित नहीं है, बल्कि यह प्रकृति और समाज के साथ सामंजस्यपूर्ण संबंध बनाने का एक तरीका भी है। धर्म का पालन करने का एक रूप है, प्रकृति के प्रति आदर और उसका संरक्षण करना। यह एक नैतिक जिम्मेदारी के रूप में प्रस्तुत किया जाता है, जिसमें प्रकृति को किसी भी प्रकार से नुकसान पहुँचाना पाप माना जाता है। मनुस्मृति में यह कहा गया है कि प्रकृति को नुकसान पहुँचाना और उसे नष्ट करना असंस्कृत

और अनैतिक कार्य है। गीता में भगवान श्री कृष्ण ने यह बताया है कि प्रकृति का संतुलन बनाए रखना और उसका सम्मान करना आवश्यक है। गीता के अनुसार, मनुष्य का कर्तव्य है कि वह प्राकृतिक संसाधनों का विवेकपूर्ण और संतुलित उपयोग करे, ताकि धरती पर जीवन बना रहे।

(पपप) आध्यात्मिक दृष्टिकोण से पर्यावरण

हिंदू धर्म में पर्यावरण के प्रति आध्यात्मिक दृष्टिकोण को समझने के लिए यह विचार किया जाता है कि सभी जीवों, मनुष्यों, और प्राकृतिक तत्वों के बीच एक गहरे और अविभाज्य संबंध है। 'आत्मा' और 'परमात्मा' की संकल्पना का पर्यावरणीय दृष्टिकोण से बड़ा महत्व है, क्योंकि इसे समझने से यह स्पष्ट होता है कि मनुष्य केवल एक हिस्सा है जो प्रकृति का हिस्सा है, न कि उसका शासक।

३. भारतीय कृषि पद्धतियाँ

भारतीय पारंपरिक कृषि पद्धतियाँ जैसे कि 'आयुर्वेदिक खेती' और 'सार्वभौम प्रणाली' में पर्यावरण को बचाने और उसे पुनः संजीवित करने के तरीके बताए गए हैं। इन पद्धतियों में रासायनिक उर्वरकों का उपयोग कम से कम किया जाता है, और प्राकृतिक तरीके से मिट्टी की उर्वरता को बनाए रखा जाता है। वर्षा जल संचयन, जैविक खेती, और गोपालन जैसी प्राचीन पद्धतियाँ भारतीय कृषक समाज में पर्यावरणीय संरक्षण का हिस्सा रही हैं। भारत की कृषि पद्धतियाँ बहुत पुरानी और समृद्ध हैं, जो न केवल कृषि उत्पादन को बढ़ाने के लिए विकसित की गईं, बल्कि पर्यावरण के संरक्षण और स्थायित्व को भी महत्व देती हैं। भारतीय पारंपरिक कृषि पद्धतियाँ प्राकृतिक संसाधनों के संरक्षण, मृदा स्वास्थ्य, जल प्रबंधन, और जैव विविधता को बढ़ावा देने के लिए उत्कृष्ट उदाहरण प्रस्तुत करती हैं। इन पद्धतियों में हरित क्रांति से पहले की विधियाँ, जैसे कि जैविक कृषि, वर्षा आधारित खेती, और भूमि के दीर्घकालिक स्वास्थ्य को बनाए रखने के उपाय, प्रमुख थीं। ये पद्धतियाँ पर्यावरणीय संतुलन बनाए रखने में सहायक रही हैं और आज भी कई क्षेत्रों में प्रासंगिक हैं।

(i) जैविक कृषि (Organic Farming)

भारतीय कृषि में परंपरागत रूप से जैविक कृषि पद्धतियों का पालन किया जाता था, जिसमें रासायनिक उर्वरकों और कीटनाशकों के बजाय प्राकृतिक संसाधनों का उपयोग किया जाता था। जैविक खेती में मिट्टी की उर्वरता बनाए रखने के लिए गोबर, हरी खाद, और अन्य जैविक पदार्थों का उपयोग किया जाता था। इस प्रकार की खेती में न केवल मृदा की गुणवत्ता बनी रहती है, बल्कि जल और वायु की गुणवत्ता पर भी सकारात्मक प्रभाव पड़ता है।

गोवर्धन पूजा और गोवर्धन उर्वरक भारतीय समाज में गोवर्धन पूजा और गोवर्धन उर्वरक का इस्तेमाल पारंपरिक रूप से होता आया है। इसमें गोबर से बने खाद का उपयोग करके मिट्टी की उर्वरता बढ़ाई जाती है, जो जैविक खेती का एक अहम हिस्सा है।

मिट्टी की उर्वरता और रासायनिक खादों का प्रतिस्थापन: भारतीय किसान अक्सर रासायनिक उर्वरकों की जगह प्राकृतिक उर्वरकों जैसे गोबर की खाद, हरी खाद (पौधों से बनी खाद), और मृदा कोलेज (पशुओं से प्राप्त खाद) का उपयोग करते थे, ताकि भूमि की स्थायी उर्वरता बनी रहे।

(ii) वर्षा आधारित कृषि (Rainfed Agriculture)

भारत में अधिकांश कृषि वर्षा पर निर्भर होती है, और पारंपरिक कृषि पद्धतियाँ वर्षा आधारित होती हैं। इसमें मिट्टी के स्वास्थ्य और जल के पुनर्चक्रण पर ध्यान दिया जाता था। पारंपरिक भारतीय कृषक वर्षा के पैटर्न के आधार पर फसलों का चयन करते थे और वर्षा के जल को कुशलतापूर्वक संचय करने के उपायों पर काम करते थे। जल संचयन प्रणालियाँ: पारंपरिक भारतीय कृषि पद्धतियों में जल संचयन के विभिन्न उपायों को अपनाया जाता था, जैसे 'तालाब', 'कुआ', 'नदी पुनर्वास', और 'वाटरशेड प्रबंधन'। इन प्रणालियों का उद्देश्य वर्षा जल को संचित करना और सूखा पड़ने पर उसे उपयोग में लाना था।

सतत जल उपयोग:

वर्षा आधारित कृषि में जल की संचित और सतत उपयोग की अवधारणा को प्राथमिकता दी जाती थी। विशेष रूप से मध्य भारत में शनदियों और झीलों के आसपास खेती का प्रणाली प्रचलित थी, जिससे जल का संरक्षण किया जाता था।

(iii) सार्वभौमिक कृषि प्रणाली (Agroforestry)

भारतीय पारंपरिक कृषि में अन्य खेती प्रणालियों के साथ पेड़-पौधों का मिश्रण किया जाता था, जिसे सार्वभौमिक कृषि कहा जाता है। इस प्रणाली में कृषि और वनस्पति दोनों को एक साथ उगाया जाता था, जिससे भूमि की उर्वरता बनी रहती थी और पर्यावरण पर सकारात्मक प्रभाव पड़ता था।

सार्वभौमिक कृषि में वृक्षों का महत्व:

भारतीय पारंपरिक कृषि में कृषि भूमि पर वृक्षों को उगाया जाता था, जैसे आम, जामुन, और नारियल के पेड़। ये वृक्ष न केवल खाद्य उत्पादन में सहायक होते थे, बल्कि मिट्टी के कटाव को रोकने, जलवायु को स्थिर रखने और जैव विविधता को बढ़ावा देने का कार्य भी करते थे।

मृदा संरक्षण: वृक्षों और फसलों की मिश्रित खेती मृदा की संरचना को मजबूत बनाती है और मृदा का क्षरण रोकने में

मदद करती है। यह कृषि भूमि को लंबे समय तक उत्पादक बनाए रखता है और जलवायु परिवर्तन के प्रभावों से बचाव करता है।

(iv) पानी की बचत करने वाली खेती (जमत-ब्देमतअपदह।हतपबनसजनतम)

पारंपरिक भारतीय कृषि में जल का अत्यधिक संरक्षण किया जाता था, क्योंकि भारतीय कृषि अधिकांशतः जलवायु परिवर्तनों और वर्षा पर निर्भर थी। किसानों ने जल की बचत के लिए कई तकनीकों का पालन किया, जैसे: कुआ और तालाबों का निर्माण: भारतीय गाँवों में जल संचयन के लिए कुआ और तालाबों का निर्माण पारंपरिक तौर पर किया जाता था। ये जलाशय वर्षा के पानी को संचित करने के लिए उपयोग में लाए जाते थे, ताकि सूखा पड़ने पर किसानों को पानी मिल सके।

जलवायु आधारित कृषि पद्धतियाँ:

विभिन्न क्षेत्रों में विभिन्न प्रकार की कृषि पद्धतियों का पालन किया जाता था, जो वर्षा और जलवायु के आधार पर बदलती थीं। जैसे, दक्षिण भारत में एकल फसल की जगह बहु-फसल की प्रणाली अपनाई जाती थी।

(v) नदी और जल स्रोतों का संरक्षण

भारतीय संस्कृति में नदियों और जल स्रोतों को पवित्र माना जाता है और उनका संरक्षण किया जाता था। हिन्दू धर्म में नदियों को देवी माना गया है, जैसे गंगा, यमुना, सरस्वती आदि। इन नदियों के संरक्षण के लिए विभिन्न धार्मिक और सामाजिक रीति-रिवाजों का पालन किया जाता था।

गंगा नदी का महत्व:

गंगा नदी के संरक्षण के लिए विभिन्न उपाय किए जाते थे, जैसे नदी के किनारे बसी बस्तियों में सफाई, जल का आदान-प्रदान, और नदियों का पुनर्नवीनीकरण।

(vi) विविधता आधारित कृषि (ठपवकपअमतेपजल-ठैमक।हतपबनसजनतम)

भारतीय कृषि पारंपरिक रूप से जैव विविधता पर आधारित रही है। किसान एक ही खेत में विभिन्न प्रकार की फसलें उगाते थे, जिससे मृदा की उर्वरता बनी रहती थी और कीटों और रोगों से निपटने में मदद मिलती थी।

फसल चक्र (Crop Rotation):

भारतीय किसानों ने फसल चक्र अपनाया, जिसमें एक ही भूमि पर लगातार एक ही फसल उगाने के बजाय, विभिन्न प्रकार की फसलें उगाई जाती थीं। इससे भूमि की उर्वरता बनी रहती थी और मृदा के पोषक तत्वों का संतुलन बनाए रखा जाता था।

भारतीय पारंपरिक कृषि पद्धतियाँ न केवल कृषि उत्पादन के लिए महत्वपूर्ण रही हैं, बल्कि ये पर्यावरण संरक्षण और स्थायित्व को भी बढ़ावा देती हैं। ये पद्धतियाँ आज के समय में पर्यावरणीय संकट और जलवायु परिवर्तन जैसी समस्याओं का समाधान प्रस्तुत करने में सहायक हो सकती हैं। भारतीय कृषि में प्राकृतिक संसाधनों का विवेकपूर्ण उपयोग, जैव विविधता का संरक्षण, और जलवायु पर प्रभाव कम करने के उपाय आज भी प्रासंगिक हैं और इन्हें अपनाने से पर्यावरणीय स्थिरता प्राप्त की जा सकती है

४. प्राकृतिक संसाधनों का संरक्षण

भारतीय पारंपरिक ज्ञान में प्राकृतिक संसाधनों जैसे जल, भूमि, और वनस्पतियों के संरक्षण पर विशेष ध्यान दिया गया है। उदाहरण के रूप में, 'जल संसाधन प्रबंधन' के पारंपरिक तरीके जैसे कि 'कुआ', 'तालाब', और 'नदी संरक्षण' ने भारतीय समाज में जल के महत्व को दर्शाया है। यह पारंपरिक प्रणालियाँ आज भी जल संकट के समाधान में उपयोगी साबित हो सकती हैं। भारत का प्राचीन ज्ञान प्राकृतिक संसाधनों के संरक्षण और उनके सतत उपयोग के बारे में गहरी समझ और संवेदनशीलता प्रदान करता है। भारतीय दर्शन और परंपराएँ प्राकृतिक संसाधनों को केवल उपयोग के लिए नहीं, बल्कि उनके साथ एक समग्र और संतुलित संबंध बनाने के रूप में देखती हैं। भारतीय संस्कृति में प्राकृतिक संसाधनों का संरक्षण एक नैतिक और धार्मिक कर्तव्य माना जाता है। यह विचार पूरी दुनिया में जलवायु परिवर्तन, पारिस्थितिकी संकट, और प्राकृतिक संसाधनों की अत्यधिक खपत के संदर्भ में बहुत प्रासंगिक है। भारतीय ज्ञान परंपरा में प्राकृतिक संसाधनों के संरक्षण के कई महत्वपूर्ण सिद्धांत और पद्धतियाँ रही हैं, जो न केवल पर्यावरण को संतुलित रखने के लिए सहायक हैं, बल्कि समाज को भी दीर्घकालिक लाभ प्रदान करती हैं।

(i) प्राकृतिक संसाधनों का धार्मिक और दार्शनिक दृष्टिकोण

भारतीय संस्कृति में प्राकृतिक संसाधनों को देवी-देवताओं के रूप में पूजा गया है, और उनका संरक्षण एक धार्मिक कर्तव्य माना जाता है। हिंदू धर्म, जैन धर्म, बौद्ध धर्म, और सिख धर्म में प्रकृति का सम्मान करने और प्राकृतिक संसाधनों के संतुलित उपयोग पर विशेष जोर दिया गया है।

इस प्रकार के धार्मिक दृष्टिकोण से यह संदेश मिलता है कि प्रकृति के साथ संतुलन बनाए रखना और उसे नुकसान पहुँचाने से बचना आवश्यक है। वसुधैव कुटुम्बकमः यह भारतीय दर्शन का सिद्धांत है, जिसका अर्थ है 'संपूर्ण पृथ्वी एक परिवार है'। इस विचार से यह समझ आता है कि सभी प्राकृतिक संसाधनों का उपयोग साझा जिम्मेदारी के रूप में किया

जाना चाहिए और इन्हें बचाने के लिए सामूहिक प्रयास करने चाहिए।

(ii) वृक्षारोपण और वनों का संरक्षण

प्राचीन भारतीय समाज ने वनों के महत्व को समझा था और उनका संरक्षण किया था। जंगलों को न केवल आर्थिक संसाधन के रूप में, बल्कि पारिस्थितिकीय संतुलन बनाए रखने के लिए भी महत्वपूर्ण माना गया था।

वृक्ष पूजा:

भारत में वृक्षों की पूजा की जाती है, जैसे बौद्ध धर्म में बोधि वृक्ष, हिंदू धर्म में पीपल और तुलसी। इन वृक्षों को संरक्षण की आवश्यकता के रूप में देखा गया था। वृक्षों के संरक्षण को न केवल धार्मिक कर्तव्य बल्कि पारिस्थितिकीय संरक्षण का भी हिस्सा माना गया है।

वन्यजीव संरक्षण:

भारतीय समाज में जंगलों में रहने वाले जानवरों और पक्षियों के संरक्षण पर भी जोर दिया जाता था। वन्यजीवों की रक्षा के लिए 'अरण्य' (वन) को पवित्र माना गया था, जहाँ शिकार करना प्रतिबंधित था।

(iii) जल प्रबंधन और जल संरक्षण

भारत में जल का संरक्षण और उसके सतत उपयोग पर विशेष ध्यान दिया गया है। जल की अत्यधिक महत्वता के कारण भारतीय समाज ने जल प्रबंधन के लिए कई पारंपरिक प्रणालियाँ विकसित कीं, जिनमें से कुछ आज भी प्रासंगिक हैं।

कुंआ, तालाब और झीलों का निर्माण भारतीय समाज में जल स्रोतों के निर्माण और उनके संरक्षण के लिए कुंआ, तालाब, और झीलों का निर्माण किया जाता था। यह जलाशय वर्षा के पानी को संचित करने के लिए बनाये जाते थे, ताकि सूखा पड़ने पर जल उपलब्ध रहे।

जल का धार्मिक महत्व:

भारत में जल को पवित्र माना जाता है, और इसे देवी के रूप में पूजा जाता है, जैसे गंगा, यमुना, सरस्वती आदि। जल स्रोतों की रक्षा के लिए लोग धार्मिक रीति-रिवाजों का पालन करते थे। इस दृष्टिकोण से जल का संरक्षण एक धार्मिक कर्तव्य और पर्यावरणीय जिम्मेदारी मानी जाती है।

(iv) सतत कृषि और मृदा संरक्षण

भारतीय पारंपरिक कृषि पद्धतियाँ प्राकृतिक संसाधनों के संरक्षण में सहायक रही हैं। इन पद्धतियों में मृदा के स्वास्थ्य को बनाए रखने, जल उपयोग को नियंत्रित करने, और जैव विविधता को बढ़ावा देने पर विशेष ध्यान दिया गया है।

जैविक खेती:

भारतीय किसान पारंपरिक रूप से जैविक खादों जैसे गोबर की खाद, हरी खाद, और अन्य जैविक उर्वरकों का उपयोग करते थे। इससे मृदा की उर्वरता बनी रहती थी और रासायनिक उर्वरकों का प्रयोग कम किया जाता था, जो पर्यावरण के लिए हानिकारक हो सकते हैं।

सार्वभौमिक कृषि (Agroforestry):

भारतीय कृषि में वृक्षों की मिश्रित खेती की प्रणाली प्रचलित थी, जिसमें कृषि फसलों के साथ वृक्षों की भी खेती की जाती थी। इससे मृदा का कटाव रोका जाता था, और भूमि की उर्वरता और जैव विविधता बढ़ाई जाती थी।

(v) वस्तु और ऊर्जा संसाधनों का विवेकपूर्ण उपयोग

भारतीय संस्कृति में संसाधनों का विवेकपूर्ण उपयोग और पुनः उपयोग की परंपरा रही है। यह प्राकृतिक संसाधनों के संरक्षण में महत्वपूर्ण योगदान करता है।

पुनः उपयोग और पुनर्चक्रण:

भारतीय समाज में पुराने वस्त्रों, बर्तनों और अन्य सामग्रियों का पुनः उपयोग करने की प्रथा रही है। इसके अलावा, जल और ऊर्जा के स्रोतों का भी विवेकपूर्ण उपयोग किया जाता था, जैसे सूरज की रोशनी और हवा का उपयोग।

वैकल्पिक ऊर्जा स्रोतों का उपयोग:

भारतीय समाज ने सौर ऊर्जा, पवन ऊर्जा, और जल विद्युत जैसे वैकल्पिक ऊर्जा स्रोतों का भी इस्तेमाल किया है।

भारतीय संस्कृति में प्राकृतिक संसाधनों का संरक्षण केवल एक पर्यावरणीय आवश्यकता नहीं बल्कि एक नैतिक और धार्मिक कर्तव्य के रूप में देखा जाता है। यह पारंपरिक ज्ञान और अभ्यास न केवल पर्यावरण की रक्षा करते हैं, बल्कि समाज के लिए एक स्थिर और समृद्ध भविष्य की दिशा में भी मार्गदर्शन प्रदान करते हैं। भारतीय ज्ञान परंपरा में यह विचार निहित है कि मनुष्य प्रकृति का शोषक नहीं बल्कि उसका संरक्षक और सहचारी है। इसलिए, भारतीय दृष्टिकोण से प्राकृतिक संसाधनों का संरक्षण न केवल वर्तमान पीढ़ी के लिए बल्कि आने वाली पीढ़ियों के लिए भी महत्वपूर्ण है।

निष्कर्ष

भारतीय पारंपरिक ज्ञान न केवल हमारे दैनिक जीवन का हिस्सा रहा है, बल्कि यह पर्यावरण संरक्षण में भी महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। भारतीय संस्कृति ने हमें यह सिखाया है कि प्रकृति के साथ सामंजस्यपूर्ण संबंध बनाकर ही हम स्थायी विकास और पर्यावरणीय संतुलन बनाए रख सकते हैं। आज के

वैज्ञानिक दृष्टिकोण के साथ भारतीय पारंपरिक ज्ञान को जोड़ने से हम पर्यावरणीय संकटों का सामना बेहतर तरीके से कर सकते हैं। हमें इस अनमोल धरोहर को पुनः जागरूकता के साथ अपनाना होगा ताकि आने वाली पीढ़ियों के लिए एक स्वस्थ और संतुलित पर्यावरण सुनिश्चित किया जा सके।

संदर्भ

१. श्रीवास्तव-डॉ. राजीव कुमार- वैश्वीकरण एवं समाज - वैभवलक्ष्मी प्रकाशन -वाराणसी।
२. स्वान, जावेद (१९६६, सितंबर), पर्यावरण शिक्षा की चुनौती. फी डेल्टा कम्पन, ५१, २६-२८

३. पामर, जे.ए, १९६८, २१वीं सदी में पर्यावरण शिक्षा: सिद्धांत, अभ्यास, प्रगति और वादा, राजतलेज ।
४. राष्ट्रीय शिक्षा नीति १९८६, अनुच्छेद ८४, मानव संसाधन विकास मंत्रालय, भारत सरकार (शिक्षा विभाग), नई दिल्ली १९८६।१७७
५. आर्य डह. सुरेन्द्र, १९६६, मनुस्मृति, आर्य साहित्य प्रचार ट्रस्ट, ४५५, खारी बाबली, दिल्ली-६
६. उपाध्याय पं. गंगाप्रसाद, २००८, आस्तिकवाद, श्रीघूड़मल प्रहलाद कुमार आर्य धर्मार्थ ट्रस्ट ब्यानिया पाड़ा हिण्डौन सिटी, राजस्थान
७. कौशिक एस.डी., २००६, भौगोलिक विचार धाराएं एवं विधि तन्त्र, रस्तोगी पब्लिकेशन्स, शिवाजी रोड, मेरठ

